अध्यक्ष महोदय: कृपया इसे शीघ्र रखिए। क्या आपने इसे सभा पटल पर रख दिया है?

श्री एम. कमालुद्दीन अहमद: जी हां। ...*(व्यवधान)*

अध्यक्ष महोदय: बस?

...*(व्यवधान)*

अध्यक्ष महोदय: यह अच्छा है। सभी भाषणों को जो कि सभापटल पर रखे गए हैं, सभा की कार्यवाही का हिस्सा माना जाएगा।

श्री इन्द्र कुमार गुजराल

प्रधान मंत्री (श्री इन्द्र कुमार गुजराल): माननीय अध्यक्ष महोदय, इससे पूर्व कि मैं आज के विषय पर बोलूं क्या मैं आपके जन्मदिन की 50वीं वर्षगांठ के अवसर पर अपनी हार्दिक शुभकामनाएं तथा इस सदन की शुभकामनाएं आप तक पहुंचाने में अपने योग्य साथी, प्रतिपक्ष के नेता के साथ सम्मिलित हो सकता हूं। हमारी ओर से जन्मदिन की ढेर सारी शुभकामनाएं।

आप भारत के स्वतंत्र होने के एक पखवाड़े के बाद पैदा हुए थे। अत: यह विधाता की विलक्षणता ही दिखायी पड़ती है कि आपके जन्मदिन की 50वीं वर्षगांठ स्वतंत्रता के 50वें वर्ष में ही पड़ती है। मेरा विश्वास है कि राष्ट्र की सेवा में आपके लिए एक बेहतर भविष्य इंतजार कर रहा है आपको मेरी बधाईयां।

अध्यक्ष महोदय: आपका बहुत-बहुत धन्यवाद।

श्री इन्द्र कुमार गुजराल: माननीय अध्यक्ष महोदय, यह चर्चा कराने के लिए आपने जो नवीन विचार रखा उसके लिए भी क्या मैं आपको बधाई दे सकता हूं? मुझे यह कहना चाहिए तथा मैं यह स्वीकार करता हूँ कि निसंदेह यह हमारे गणतंत्र के 50 वर्षों के संपूर्ण इतिहास में अभूतपूर्व है ऐसा पहली बार हुआ है।

पुन: आपको इस बोध क्षमता के लिए मैं बधाई देने में श्री अटल बिहारी वाजपेयी के साथ हूँ। मैं बहुत साफ तौर पर यह कहना चाहूंगा कि उधर तथा इधर दोनों पक्ष के बहुत से लोग शुरू में यह संदेह कर रहे थे कि इस पर कैसे चर्चा की जायेगी कितनी दिलचस्पी ली जाएगी कितने सदस्य वास्तव में उन विषयों पर बोलेंगे जिन पर हम सोच रहे थे। कभी-कभी ये संदेह अविश्वास की सीमा तक भी पहुंच जाते। मुझे कहना पड़ेगा कि जिस प्रकार यह चर्चा इतने दिनों तक चली तथा सदस्यों ने जिस परिश्रम से इसमें भाग लिया है, उससे सभी अविश्वास तथा संदेह मिथ्या सिद्ध हुए हैं।

चर्चा बहुत ही उच्च स्तरीय रही है। मैं समझता हूँ कि संसद में मेरे इतने लंबे कार्यकाल में मैंने सदस्यों में इतना उत्साह तथा इतनी रुचि नहीं देखी कि वे रात-रात भर बैठे हो और चर्चा में भाग लिया हो। साथ ही जैसा कि अटल जी ने ठीक ही कहा है कि मुझे सभा के उन सभी सदस्यों की प्रशंसा करनी चाहिए जिन्होंने अपने विषयों जिन पर वे बोल रहे थे स्वयं को तैयार किया। सदन के मामले में भी यही बात हुई। अत: एक प्रकार से संपूर्ण संसदीय प्रणाली के लिए यह प्रशंसा की बात है।

मैं यह कहना चाहूंगा कि माननीय सदस्यों ने शोरगुल जो हम आम दिनों के वाद-विवाद के दौरान देखते हैं से ऊपर उठकर असाधारण साहस, दृष्टि तथा क्षमता का प्रदर्शन किया है। इन पांच दिनों में ये बातें मिथ्या साबित हुई हैं। सामूहिक आत्म चिंतन हमारे लिए कुछ नई बात है परन्तु इसके साथ ही मैं यह समझता हूँ कि हमारे गणतंत्र की स्वर्ण जयंती पर सदन द्वारा दी जाने वाली यह सर्वश्रेष्ठ श्रद्धांजलि है। अत: अध्यक्ष महोदय, पिछले कुछ दिनों में जो कुछ भी हुआ उसका श्रेय फिर एक बार आपको ही जाता है। मैं दोहराना चाहूंगा कि कभी-कभी तो चर्चा प्रात: काल तक चलती रही अथवा पूरी रात तक चलती रही। चर्चा उपयोगी, शिक्षाप्रद तथा विचारोत्पादक रही और कई बार हमने अपनी लोकतांत्रिक व्यवस्था के अज्ञात पहलुओं की जानकारी प्राप्त की। संसद ने एक संगठन के रूप में नई ऊंचाइयों को छुआ और इसने दलीय संबद्धता से ऊपर उठने की क्षमता प्राप्त की है तथा इन 50 वर्षों की उपलब्धियों एवं कमियों की उल्लेखनीय वस्तुनिष्ठ जांच की है। यहां और दूसरे सदन में कुछ भाषणों को जिसने भी सुना वह हमें यह विश्वास करने की ओर प्रेरित करता है कि राष्ट्र लगातार प्रबुध महाविभूतियों तथा महान विचारों वाले लोगों को उत्पन्न कर रहा है। गणतंत्रता के प्रथम दिन की भांति राष्ट्र स्वयं को लगातार पुन: समर्पित कर रहा है। अत: उसी भावना के तहत यह चर्चा हुई है।

माननीय सदस्यों ने जो कुछ कहा है मैंने उसको नोट कर लिया है। जैसा कि मेरे योग्य साथी, प्रतिपक्ष के नेता ने सुझाव दिया है निश्चय ही हम उन सभी की कही गई बातों पर अवश्य ध्यान देंगे। तथा उन्हें संकलित करेंगे और जिन विभिन्न मसलों का यहां जिक्र किया गया है उन पर कार्यवाई भी प्रारंभ करेंगे। मुझे ऐसे समय बोलने के लिए कहा गया है जब मुझे चर्चा को समाप्त करना है यह एक बहुत ही विशाल कार्य है जिसे मैं नहीं कर सकता क्योंकि यह आसान नहीं है। जो कुछ भी पिछले लगभग पांच दिनों से बुद्धिमतापूर्ण शब्दों में कहा गया है और जो विशिष्ट मुद्दे यहां उठाए गए हैं, मेरे लिए उन सभी का उत्तर देना न तो साध्य है और न ही संभव है।

किसी समय किसी अवसर पर मेरे साथियों ने वाद-विवाद में भाग लिया है तथा अपने विचार प्रकट किये हैं। जो कहा गया है मैं उसे दुहराने की कोशिश नहीं करूँगा। मैं केवल यही कहना चाहूंगा कि वाद-विवाद ने मुझे बहुत हद तक प्रेरित किया है। इसने मुझे विशेषकर 50वें वर्ष में यह सोचने पर बाध्य कर दिया है कि भारत क्या है तथा भारत की परिभाषा क्या है। हम अपने को पुन: परिभाषित कर रहे हैं तथा यह पुन: परिभाषा बहुत ही उपयोगी रही है क्योंकि इस सदन एवं दूसरे सदन में बैठे हुए हमारे योग्य साथियों ने बहुत उल्लेखनीय दृष्टि तथा विचारों को सामने रखा है कभी-कभी तो मुझे महसूस हुआ कि चर्चा ने उत्कृष्टता की सीमा को छू लिया है। कभी-कभी मैंने महसूस किया कि हम उत्कृष्ट तरीके से स्वयं से ऊपर उठ रहे हैं तथा मैंने यह भी महसूस किया कि इन सबसे महत्वपूर्ण है हमारा देश, हमारा राष्ट्र। स्वतंत्रता संग्राम हमारी चर्चा की पृष्ठभूमि रहा है। हमने यह भी देखा है तथा महसूस किया है कि जिस संग्राम की हम बात कर रहे हैं जिसने 15 अगस्त, 1947 को स्वतंत्रता प्रदान की वे मेरे विचार से एक प्रकार से हमारी सभ्यता का विस्तार ही था।

जब हम अपनी सभ्यता की ओर देखते हैं, इसकी चोटियों और घाटियों को देखते हैं तब हम पाते हैं कि हमारा स्वतंत्रता संग्राम कैसे सफल हुआ था। स्वतंत्रता संग्राम की गाथा बहुत लम्बी रही है। मैं स्वतंत्रता संग्राम इसकी अवधि तथा इसके इतिहास जिससे वह गुजरा के बारे में बात करके आपका समय नष्ट नहीं करूंगा। परन्तु एक बात बहुत ही स्पष्ट थी। जब हम उस युग गांधी जी के समय की ओर मुड़कर देखते हैं तो हम बार-बार यह अनुभूति करते हैं कि स्वतंत्रता संग्राम मुख्यत: इसलिए सफल हुआ क्योंकि इसकी जड़ें हमारी अपनी मिट्टी अपनी सभ्यता अपनी संस्कृति में काफी गहरी थी। गांधी दर्शन तथा उनके प्रेरणा स्रोत सभी स्वदेशी थे। गांधीवादी प्रेरणा स्रोत विदेशी नहीं थे उन्हें दूसरे देशों से आयात नहीं किया गया था वह यहीं उत्पन्न हुए थे।

जब गांधी जी बार-बार धर्म की बात करते थे। धर्म भारतीय स्वतंत्रता संग्राम का मूल होने के कारण कुछ ऐसी चीज था जिसने वास्तव में हमारे दिमाग और हमारे संघर्ष को एक नया आयाम दिया। नि:सन्देह, जब वह धर्म की बात करते थे, तो उनका आशय धर्म से कुछ अलग था, उनका आशय सम्प्रदाय पंथ पूजा से अलग था, उनका आशय जिसे हम चर्च कहते हैं उससे अलग था। उनकी धर्म की परिभाषा व्यापक थी। मैं उनमें से एक हूं जो विश्वास करते हैं और मैं समझता हूँ कि सदन भी विश्वास करता है कि एक शब्द धर्म है जिसका किसी भी गैर-जातीय भाषा में अनुवाद नहीं किया जा सकता। गांधी जी ने यही अपनी बात की।

गांधी जी ने पंथ निर्माण करने का प्रयास कभी नहीं किया। उन्होंने कोई मठ बनाने का प्रयत्न कभी नहीं किया। उनका दृष्टिकोण यह मूलत: किसी अन्य बात से कहीं ज्याद: दया पर आधारित था। जब हम मुड़कर गांधीजी जी के बोध, उनके, दृष्टिकोण उनके अधिकारिक संचालन को देखते हैं तो मेरे दिमाग में एक विचार आता है कि उनकी दया प्राय: महात्मा बुद्ध की याद दिलाती है। मेरे विचार से उन्होंने उस दया धर्म की धारा जो महात्मा बुद्ध ने सम्पूर्ण विश्व में व्याप्त की थी, पुन: प्रवाहित कर दी। गांधीवादी विचारधारा में मूल रूप से प्राय: जो विचार और आदर्श थे वे हमारे लिए एकदम अपरिचित से थे। कभी-कभी वे हमें हैरान कर देते थे और कभी कभी वे उन्हें शब्दों की नई व्याख्या करके उन्हीं शब्दों को नया अर्थ दे देते थे। उन्होंने राष्ट्र के व्यापक पैमाने पर अलग ढंग से सोचना शुरू किया। यह गौर करने लायक बात है कि गांधी जी उन पुराने मुहावरों पुरानी उक्तियों और पुराने शब्दों का प्रयोग करते थे, जिनका हम प्रयोग करते रहे हैं, उन्होंने उनको नया अर्थ दिया और उन्होंने जनता को संगठित करने उसमें एक लहर पैदा करने के लिए उनका प्रयोग किया। कुछ लोग जो यह सोचते थे कि वे बहुत अधिक बुद्धिमान हैं वे हतप्रभ थे। कभी-कभी वे असमंजस की स्थिति में होते थे, क्योंकि वे इसके लिए तैयार ही नहीं होते थे कि पुरानी कहावतों का नये तरह का अर्थ दिया जा सकता है जो गांधी दिया करते थे।

हमारी जन लहर ज्वार-भाटा में बदल गई, हमने कुछ चाहा वह प्राप्त हुआ। इस प्रकार भारत के स्वतंत्रता संग्राम में भारत की सभ्यतागत एकता को पूरा महत्व दिया गया। भारतीय सभ्यता की मुख्य खोज हमेशा विविधताओं पर निर्भर रही। ये वे व्यापक विविधताएं हैं जिन्हें हम अपने जीवन में अनुभव करते रहते हैं, निरंतर विभिन्न भाषाओं, विभिन्न सभ्यताओं विभिन्न ऐतिहासिक अनुभवों और जीवन के विभिन्न तरीकों का अनुभव करते रहते हैं लेकिन फिर भी हम वहां एक खिंचाव पाते हैं, जहां हम सभी जुड़ते हैं। गांधी जी का मूल योगदान इन विविधताओं में पुन: एकता को ढूंढना था। यह अब भी हमारे देश का एक पैमाना बना हुआ है। इन पचास वर्षों में हमने इसे सीखा है। हमने बार-बार कहा है कि हमने स्वतंत्रता संग्राम में कुछ भी पाया इसी बोध के कारण पाया। यदि गांधी जी उस समय एक बात पर अथवा एक धर्म पर अथवा जीवन के एक तरीके पर जोर देते तो संग्राम को कभी सफलता नहीं मिलती, भारत में क°ी एकता स्थापित नहीं होती।

अत: महोदय हमें यह बात अपने लिए दोहरानी चाहिए और आपकी आज्ञा से मेरा तो सदन से यह निवेदन है कि विविधता की यह एकता वह ध्वज है जो भारतीय स्वतंत्रता की मजबूत मस्तूल पर ऊंचाइयों पर फहराता रहना चाहिए। यह मुख्य बात है।

हम कभी-कभी इसमें गलती करते हैं। कभी-कभी हम महसूस करते हैं कि शायद विविधता में एकता की तुलना में एकरूपता अधिक महत्वपूर्ण है। मैं विनम्रता से दोहराना चाहूंगा कि यदि इसे हम एकरूपता के सांचे में ढालना शुरू करें तो भी यह राष्ट्र कभी एक नहीं रहेगा इसमें कभी भी एकता नहीं रहेगी। हमें हमारी भाषाओं को सम्मान देना चाहिए, हमें अपने जीवन के तरीकों को सम्मान देना चाहिए, हमें अपने धर्मों को सम्मान देना चाहिए, हमें अपनी आस्थाओं का सम्मान करना चाहिए, हमें अपने ऐतिहासिक अनुभवों को सम्मान देना चाहिए। तभी यह राष्ट्र गर्व के साथ स्वयं को भारत राष्ट्र कह सकेगा।

पुनः भारत राष्ट्र विविधताओं से भरा राष्ट्र है। मैं तो कहता हूँ कि अगले 50 वर्षों या एक शताब्दी के लिए हमारे समक्ष यह एक चुनौती है यदि हम इस सच्चाई को पहचान लें तो हम जीवन के एक पहलू पर एक भाषा या एक धर्म पर बल देने के प्रयास के उलझाव में नहीं फंसेंगे और इस प्रकार अपने पथ पर कभी नहीं भटकेंगे। यदि हम ऐसा करते हैं तो यह गलती हमें बहुत भारी पड़ेगी। कभी कभी संकुचित राजनीतिक दृष्टिकोण, कभी-कभी एक विशेष आन्दोलन की समीचीनता, एक विशेष चुनाव की लाचारी हमें अंधा कर सकती है और हम मत प्राप्त करने के लिए एक जाति अथवा एक धर्म अथवा एक भाषा पर जोर देने का प्रयत्न कर सकते हैं। मैं सोचता हूं कि इस सदन को आज यह दृढ़ निश्चय करना चाहिए कि हम ऐसा कभी नहीं होने देंगे।

एक बार जब हम निश्चित रूप से यह समझ लें कि हमारी अपनी विविधता है जिनका हम सम्मान करते हैं, हमारे जीने के अपने अलग अलग ढंग हैं, हमारी आस्थाएं अलग-अलग हैं तो हम एक दूसरे का सम्मान करेंगे। हम किसी का दिल नहीं दुखाएंगे। हम ऐसा कुछ भी करने का प्रयत्न नहीं करेंगे जिससे किसी अन्य भारतीय की भावनाओं को ठेस पहुंचती हो। हम हमेशा पहले भारत और फिर भारतीयता की बात करते हैं। जी हाँ भारत पहले और भारतीयता पहले इसी अवधारणा का परिणाम है और यह जीवन का एक तरीका है। यदि हम एक दूसरे का सम्मान करते हैं यदि हम अपनी अवधारणा, दिल और दिमाग को तोड़ने का प्रयत्न नहीं करते हैं तो भारत का भविष्य सदा सुरक्षित रहेगा। मैं तो ये कहूंगा कि हमें इस देश की एकता के मंत्र को लागू करने में आने वाली कठिनाईयों को दूर करना होगा। मैं पंडित नहीं हूं जैसा कि श्री अटल बिहारी वाजपेयी है, किन्तु मैं कहना चाहूंगा कि मेरे विचार से भारत की एकता का महान मंत्र जो महानता का प्रवेश द्वार है के तीन आशय हैं मेल, सामन्जस्य सहनशक्ति, विविधताओं का सम्मान और उसमें बड़ी समझदारी से सम्मिलित सांतत्य और परिवर्तन भी है। सांतत्य महत्वपूर्ण है, क्योंकि सांतत्य के बिना निष्क्रियता आ सकती है। हमारी भाषाओं, हमारे संगीत हमारे काव्य और हमारे दर्शनों को विगत शताब्दियों से शक्ति मिली है और यदि हम इसके अन्दर एकीकरण और सामंजस्य स्थापित करते रहेंगे तो ऐसा होता ही रहेगा।

वर्षों पहले एक उर्दू कवि ने कहा था:

युनानो मिश्र रोमा सब मिट गए जहां से

कुछ बात है कि हस्ती मिटती नहीं हमारी।

वह क्या है, जिसने हमें बनाये रखा है? वह कुछ बात क्या है। मुझे विश्वास है कि हम हमेशा अपने दिमाग में रखेंगे कि यह कुछ बात है विविधताओं की एकरूपता, सम्मान, आत्मसात करने की प्रक्रिया, आत्मसात करने का साहस, निरस्त करने का साहस जो हम नहीं चाहते और आत्मसात करने का वह साहस जो हमारी सहायता करता है। इसने विगत काल में हमारी संस्कृति को शक्ति प्रदान की है और ऐसा आगे भी करता रहेगा। और इसीलिए मैं महसूस करता हूं कि यह बहुत महत्वपूर्ण है कि हम आज इस 'कुछ बात' की विकास के प्रत्येक स्तर पर खोज करें, कल हमने ऐसा किया था, कल इसे जारी रखेंगे।

इकबाल ने कहा था:

[हिन्दी]

कुछ बात है कि हस्ती मिटती नहीं हमारी।

[अनुवाद]

यह हमारी अतीत की धरोहर है तथा यह भविष्य के लिए एक चुनौती है। मैं समझता हूं कि इस चुनौती पर हमने निरंतर आत्मान्वेषण, आत्मलोचन, आत्म विश्लेषण करने और अपने आपको अनुप्राणित करने तथा साथ ही साथ अपनी धरती/अपनी परंपराओं और अपनी सभ्यता पर दृढ़ता से कायम रहते हुए विजय हासिल की है।

यह बहुत ही महत्वपूर्ण बात है कोई भी परिवर्तन ऐसा नहीं होना चाहिए जैसाकि नेहरू जी कहा करते थे, जो हमें डगमगाये। कोई भी ऐसा परिवर्तन नहीं होना चाहिए जिससे हम अपनी जड़ों से अलग हो जायें। कोई भी परिवर्तन ऐसा नहीं होना चाहिए जो हमें हमारी सभ्यता से दूर ले जाए। इसके साथ ही हममें क्षमता होनी चाहिए। जी हां, विगत में हमने उस बात को आत्मसात करने का प्रयास किया था जो कि हमारे हित में है। आज विश्व परिवर्तन के नये युग के द्वार पर खड़ा है अथवा परिवर्तन के नये युग में प्रवेश कर चुका है। प्रौद्योगिकीय परिवर्तन, विमान द्वारा लाए गए परिवर्तन अभूतपूर्व हैं, ये मानवता के इतिहास में पहले कभी नहीं हुए। मानव के समग्र इतिहास में जब से वह पैदा हुआ है मेरे विचार से इस प्रकार के अनुभव कभी नहीं किए गए हैं। इसलिए अब, इस स्तर पर, हमें भविष्य के लिए निर्णय लेना चाहिए। महोदय, आपसे और इस सभा से यही मेरी अपील है।

भारत को निर्णय लेना चाहिए कि प्रौद्योगिकी और विज्ञान के नये परिवर्तन के इस युग में भारत अग्रणी स्थान प्राप्त करे, इसे अगली पंक्ति में रहना चाहिए, नयी प्रौद्योगिकी अपनानी चाहिए क्योंकि इससे नयी सृजनशीलता उत्पन्न होनी चाहिए। इस नई सृजनशीलता से भारत एक बार फिर वही महान भारत बन जाएगा जो सदैव से रहा है।

अतः विज्ञान के इन नये मोर्चों, प्रौद्योगिकी के इन नये मोर्चों के बारे में नए विचार उत्पन्न होने चाहिएं, और नये आविष्कार किये जाने चाहिएं। इस प्रकार हम चुनौतियों को स्वीकार कर सकते हैं और इन्हें अपने लिए एक अवसर के रूप में भी उपयोग किया जा सकता है। केवल अकेले इससे ही, मैं फिर दोहराता हूं अकेले इससे ही, इस परिवर्तन से ही अग्र स्थान प्राप्त करने के लिए हमारा साहस, हमारा दृष्टिकोण, हमारा निश्चय बढ़ेगा। क्या हम वह स्थान प्राप्त कर सकेंगे जिससे भारत को प्रवेश द्वार पार करने में सुगमता हो।

आज भारत महानता की ओर अग्रसर है और यह महानता हमारी पहुंच में है और हमारी पकड़ में है। हम यह कर सकते हैं और हमें

ऐसा करना चाहिए। यह अगली शताब्दी के लिए अथवा यदि मैं ऐसा कहूं यह अगले पचास वर्षों के लिए एक चुनौती है।

एक बार मलेशिया के प्रधान मंत्री यहां आये थे। उन्होंने कहा था कि "चुनौती 20 : 20 की है।" वह अलंकारिक ढंग से बात कर रहे थे और दूरदृष्टि के बारे में भी बात कर रहे थे। आखिरकार विश्व का बेहतर नजरिया 20 : 20 का है। इसलिए हमें भी 20 : 20 की चुनौती स्वीकार करनी होगी। यह 20 : 20 प्रौद्योगिकी की चुनौती है तथा यह परिवर्तन की चुनौती है। अत: यह विवेकशील परिवर्तन उद्देश्यपूर्ण होना चाहिए तथा भारत को अब इसका अनुसरण करना चाहिए।

महोदय, इसके साथ ही हमें यह बात भी ध्यान में रखनी चाहिए कि इस राष्ट्र के सामाजिक-बौद्धिक उद्देश्य केवल आश्चर्य से देखने के लिए ही नहीं हैं जैसाकि अन्य राष्ट्र कर रहे हैं। केवल यही देखने की बात नहीं है कि कोई व्यक्ति चन्द्रमा पर उतर गया है और समाचार पत्रों में केवल यही पढ़ने की बात नहीं है कि यदि अन्य व्यक्तियों ने उपग्रह प्रौद्योगिकी प्राप्त कर ली है तो हमें भी मिल जायेगी। हमें स्वयं इसे प्राप्त करना होगा। परिवर्तन, बड़े परिवर्तन का यह ड्रामा जो कि विश्व देख रहा है उसे आत्मसात किया जाना चाहिए, यह न केवल कुछ वैज्ञानिकों द्वारा किया जाना चहिए, न केवल उन एक-दो सौ लोगों द्वारा, जो प्रौद्योगिकी संस्थान से जुड़े हैं और न केवल उन कुछ हजार लोगों द्वारा किया जाना चाहिए बल्कि मेरे विचार से हमारे समक्ष चुनौती यह है कि समग्र राष्ट्र द्वारा इस लक्ष्मण रेखा को सम्पूर्णता के साथ पार किया जाना चाहिए। जब तक समग्र राष्ट्र इसे पार नहीं करता है और प्रौद्योगिकी के युग में प्रवेश नहीं करता है तब तक राष्ट्र वास्तविक रूप में अपना स्थान प्राप्त नहीं कर सकेगा। जब मैं समग्र राष्ट्र की बात करता हूं तो मैं विशेष रूप से युवा वर्ग की बात करता हूं।

इस देश में युवा वर्ग का बहुमत है। उन्हें नयी शिक्षा दी जाती है। उन्हें नयी प्रौद्योगिकी की जानकारी दी जाती है। इस सरकार का यह कर्तव्य है, इस संसद का यह कर्तव्य है, हम सभी का संयुक्त रूप से यह कर्तव्य है कि हम यह सुनिश्चित करें कि युवा वर्ग, न केवल युवा वर्ग बल्कि महिलायें भी विज्ञान और प्रौद्योगिकी के इस नये युग में प्रवेश करें।

हमारे समाज का सबसे पिछड़ा वर्ग महिलायें हैं। शिक्षा के माध्यम से, इनका स्थान उन्हें देकर, महिलाओं को शक्ति प्रदान करके और महिलाओं के अलावा विशेष रूप से समाज के वे वर्ग जो शताब्दी से पिछड़ेपन से ग्रस्त हैं उनके लिए हम यह सुनिश्चित करें जिससे वे भी परिवर्तन के इस नये युग में प्रवेश करने हेतु सक्षम बन सकें। अनेक शताब्दियों से समाज ने उनके साथ अन्याय किया है। अनेक शताब्दियों से समाज ने उन्हें उनका उचित हिस्सा नहीं दिया। आज जब यह प्रौद्योगिकीय रूप से व्यवहार्य है, जब वैज्ञानिक दृष्टि से गरीबी और पिछड़ेपन को समाप्त करना संभव है, तो इसके लिए हम सभी को संयुक्त रूप से प्रयास करना चाहिए।

यदि मुझसे पूछा जाये कि आज राष्ट्र के समक्ष क्या चुनौती है तो मैं इसे इस प्रकार बताऊंगा। पिछड़ापन सामाजिक रूप से, आर्थिक रूप से, प्रौद्योगिकी रूप से समाप्त किया जा सकता है तथा इसे समाप्त किया जाना चाहिए। यदि हम इन तीनों बातों को पूरा कर सकते हैं तो निश्चित रूप से हम पूरे राष्ट्र को नई रोशनी दिखा सकेंगे। नई रोशनी में ले जाना भविष्य की एक चुनौती है।

एक नजरिया समाज के सभी वर्गों, सभी समुदायों, सभी धर्मों, जीवन के सभी क्षेत्रों और पुरुषों और महिलाओं का है। हमें इसकी जानकारी होनी चाहिए।

इसे केन्द्रीय बिन्दु मानकर हमारी शैक्षिक, सामाजिक, राजनैतिक और सामाजिक परिवर्तन तथा सामाजिक न्याय संबंधी सभी नीतियां इस बुनियादी धारणा से तैयार की जानी चाहिए। एक बार यदि बुनियादी धारणा स्पष्ट हो जाती है तो नीति तैयार करना एक विशद मामला बन जाता है। यदि आप इस उद्देश्य में संभ्रमित हो जाते हैं तो नीतियों में भी भारी भ्रांति रहती है। निश्चित रूप से इसका ब्यौरा तैयार किया जा सकता है। ब्यौरे पर इस गरिमायुक्त निकाय और सभा में भी चर्चा की जा सकती है तथा परिवर्तन किए जा सकते हैं।

जब मैं विज्ञान और प्रौद्योगिकी पंक्तियों के विस्तार की बात करता हूं तो मुझे इस बात की भी जानकारी रहती है कि नयी पीढ़ी हमारे जीवन में कदम रख रही है और इस नये परिदृश्य का हमारे ऊपर अच्छा और बुरा दोनों ही प्रकार का प्रभाव पड़ रहा है।

हम सभी उपग्रह, दूरदर्शन की बात करते हैं। हम सभी उन कार्यक्रमों की बात करते हैं जिन्हें कि हम देख चुके हैं। इस स्थिति में आकर या कम से कम आज सुबह मैं यह बताने की कोशिश करना केवल मेरा ही जिम्मा नहीं बनता कि हमारी प्रचार माध्यमों संबंधी नीति क्या होनी चाहिए। परन्तु मैं इस बात को भी ध्यान में रखूंगा कि उपग्रह चैनल, दूरदर्शन, दूरसंचार के विभिन्न माध्यम तथा इसके अतिरिक्त यातायात और यात्रा के भिन्न माध्यम हमारा दिशा निर्धारण कर रहे हैं तथा हमारे जीवन में प्रभावकारी परिवर्तन ला रहे हैं। आज विचारधारा में भी परिवर्तन आ रहा है तथा सामाजिक संबंधों में भी परिवर्तन आ रहे हैं। एक-दूसरे के प्रति हमारी सोच में भी परिवर्तन आ रहा है। आज शेष विश्व की तरह भारत भी संचार माध्यमों के कारण सिमट कर रह गया है। यातायात के साधनों से यह सब आसान हो गया है। टेलीफोनों ने इसे और सुगम बना दिया है तथा फैक्स से हमें बहुत अधिक सुविधा हो गयी है। अब इन सामाजिक संबंधों में नाटकीय परिवर्तन आ रहा है। हम सभी के जीवन में परिवर्तन आ रहे हैं। मेरा सब से, मेरा आशय सब है। यहां तक कि समाज के अभावग्रस्त वर्ग में भी परिवर्तन हो रहा है। तथा यह परिवर्तन कभी आन्दोलन के रूप में तथा कभी मांग के रूप में उभरता है। लेकिन नये विश्व के प्रति-ऐसा अनावरण भी अपना प्रभाव डाल रहा है कभी-कभी यह प्रभाव सकारात्मक नहीं होता है। कभी यह नकारात्मक रूप से हमारी संस्कृति को प्रभावित करता

है। कभी-कभी इसका नकारात्मक प्रभाव हमारे जीवन के तौर तरीकों को प्रभावित करता है, कभी-कभी इसका हमारी भावनाओं संगीत और साहित्य पर सकारात्मक और नकारात्मक दोनों तरह के प्रभाव पड़ते हैं। कभी-कभी यह लाभकारी होता है और जैसा कि मैंने कहा है कभी-कभी यह नकारात्मक तथा आंशिक रूप से हानिकारक होता है।

अत: जब हम अपनी सांस्कृतिक और शैक्षणिक नीतियों की समीक्षा करते हैं तो हमारा प्रयत्न यह होना चाहिए कि ये नीतियां विवेकशील हों। लेकिन पुन: वही बात सामने आती है कि कितना परिवर्तन किया जाए और इसे कितना ग्रहण किया जाए और कितना ग्रहण नहीं किया जाए। यहीं पर इस सभा की सामूहिक सोच से फायदा होता।

एक व्यक्ति के लिए यह संभव नहीं है। यहां तक कि पूरी स्थिति की कल्पना करना पूरे मंत्रिपरिषद के कुछ मंत्रियों के लिए भी संभव नहीं है। इस विषय पर इस सदन में और सदन के बाहर, प्रबुद्ध वर्गों के बीच बुद्धिजीवी वर्गों के बीच सामाजिक संगठनों तथा सभी गैर-सरकारी संगठनों द्वारा व्यापक रूप से चर्चा की जानी चाहिए और हमेशा हमारा मार्गप्रशस्त करते रहना चाहिए, विचारों का यह आदान-प्रदान ही सही मायने में लोकतंत्र है। यह विचार-विमर्श हमेशा और भी महत्वपूर्ण हो जाता है क्योंकि हमारा ध्यान पूरी तरह से इसी पर केन्द्रित रहता है।

लेकिन, साथ ही साथ जब मैंने यह कहा कि इसके कुछ हानिकारक प्रभाव भी हो सकते हैं, तो मैं इस बात को पुरजोर शोर से एक बार फिर कहता हूं कि हमें किसी भी हालत में अपनी खिड़कियों को बन्द नहीं करना चाहिए। बल्कि हमारी ऐसी स्थिति नहीं आनी चाहिए कि हम दिमाग से काम लेना ही छोड़ दें।

भारत ने ऐसा कभी नहीं किया है। हमारा इतिहास, हमारी सभ्यता हमें बताती है कि भारत का महत्व इसी बात के लिए रहा है कि इसने हमेशा अपनी खिड़कियाँ खुली रखी हैं। कवि टैगोर ने अपने उस प्रसिद्ध गीत में कहा था कि अपनी बुद्धि के दरवाजे खुले रखिए। नये विचार आने दीजिए। उन्हें आत्मसात करना सीखिए। यही बात गांधी जी ने भी कही थी। भविष्य के लिए एक बार फिर हमारे लिए यही एक मंत्र है। इसलिए समाचार-माध्यम संबंधी नीतियां, शिक्षा संबंधी नीतियां तथा आर्थिक नीतियां निर्धारित करते समय हमें यह जान लेना चाहिए कि विचार-विमर्श कैसे किया जाए तथा एक अच्छे परिवर्तन के संदर्भ में कैसे बात की जाए। इस क्रम में हमें अपने लिए कल्याणकारी चीजों को ग्रहण करते हुए उन्हें यथासंभव आत्मसात करना चाहिए।

अपने सम्पूर्ण इतिहास में ऐसा कभी नहीं हुआ कि भारत ने कुछ भी ग्रहण न किया हो। भारत ने हमेशा ग्रहण ही किया है। हम अपने संगीत की नियति पर दृष्टिपात करें। अपनी भाषाओं पर नजर डालें, हिन्दी और उर्दू की योग्यता पर नजर डालें—मैं समझता हूं कि यह सदैव, जो हमारे लिए अच्छा है उसे आत्मसात करने, ग्रहण करने और जो अच्छा नहीं है उसे अस्वीकार करने की हमारी क्षमता का प्रत्यक्षण है, उसकी अभिव्यक्ति है। मैंने जानबूझकर विदेश नीति पर इसके प्रभाव के बारे में नहीं बताया है। मैंने सांस्कृतिक, शैक्षणिक और प्रचार माध्यमों संबंधी नीति पर बात की है। परन्तु विशेष रूप से जब मैं विदेश नीति की बात करता हूँ तो मैं महसूस करता हूँ हमारी सभ्यता का इतिहास बताता है कि हमारी नीति ग्रहण करने की रही है। परन्तु साथ ही यही बात पूरे विश्व के संदर्भ में भी है। हमारी खुली नीति रही है चाहे मैं आज की बात करने अथवा पिछले वर्षों की बात करूं, विश्व की निगाहें हमेशा भारत पर रही हैं। भारत के लम्बे इतिहास के ऐसे किसी चरण का मुझे स्मरण नहीं है जब भारत ने संपूर्ण विश्व के दर्शन को ग्रहण न किया हो। जब अशोक का काल था तो वह एक ऐसे व्यक्ति थे जिसने विश्व भर में भगवान बुद्ध के सन्देश को पहुंचाया। यदि हम अपने समाज के किसी परिवर्तन के बारे में सोचते हैं तो हमने हमेशा अपने आपको विश्व और उस दृष्टिकोण के एक अंग के रूप में देखा है। मैं इस बात पर बल देता हूँ कि यद्यपि हमारा राष्ट्र-राज्य वास्तव में 15 अगस्त, 1947 को अस्तित्व में आया, हमारी भारतीय सभ्यता बहुत पुरानी है। राष्ट्रीय अवधारणा भी बहुत पुरानी है। हमारी विशेषतायें और दर्शन बहुत पुराने हैं। और इसलिए हमने हमेशा विश्व से विचारों का आदान-प्रदान करने आदर्श विचारों धारणाओं और दर्शन को ग्रहण किया है। इस अवधारणा का बेजोड़ तथ्य यह है कि भारत ने हमेशा दोहरे तरीके का अनुसरण किया है—बाहर वालों को स्वीकार किया और यहां से बाहर जाने दिया। इसीलिए भारत ने हमेशा विश्व को कुछ दिया है तथा उससे प्राप्त किया है।

जब मैं खुसरो के बारे में और उससे भी आगे के बारे में सोचता हूँ तो मैं हमेशा इस तरह से सोचता हूँ कि भारत विश्व के लिए खुला तथा विश्व भारत के लिए खुला था। यही हमारी अवधारणाओं का आधार है। अपनी सभ्यता के 5000 वर्षों की अवधि में हम कभी भी किसी ऐसे युग तक सीमित नहीं रहे जब हमने इस प्रयोजन के लिए भिन्न-भिन्न शब्द शैली का प्रयोग न किया हो कि हम विश्व में बाहर जाए और बाहर से हमारे देश में आएं। मुख्यत: इसी कारण से भारतीय सभ्यता सशक्त हुई थी *(व्यवधान)* हमारी भारतीय सभ्यता की दिलचस्प बात यह है कि इसमें अन्तर्निहित लचीलापन यह था जो हमारे लिए उपयुक्त नहीं था उससे हमने इंकार कर दिया जो कुछ हमारे लिए अच्छा था हमने वह ग्रहण किया। लेकिन अपने इतिहास में हमने कभी भी दूसरों को अपने ऊपर हावी नहीं होने दिया। आत्मसात करने और चुनौती की यह प्रक्रिया साथ-साथ चलती रही। हमें हमेशा इस बात का ज्ञान था कि कहां विरोध करना है। और साथ-साथ हम यह भी जानते थे कि कहां किन परिस्थितियों से समझौता करना है।

निस्संदेह वह समय आज के मुकाबले में काफी भिन्न था। संचार प्रणाली भिन्न थी। लोगों को काफी दूर-दूर तक पैदल जाना पड़ता था और पत्र भी घोड़ों पर लादकर भेजे जाते थे। इसमें काफी समय लगता था। इसका परिणाम यह हुआ कि भारतीय उपमहाद्वीप की ओर शेष

विश्व का ध्यान बहुत अधिक हो गया। महाद्वीप के उत्तर में हम अधिकतर मध्य एशिया के भूभागों के संपर्क में रहे हैं। यह सब हमने ऐतिहासिक तौर पर किया। हम समुद्र के उस ओर से होने वाले खतरों से अधिकतर अनभिज्ञ रहे पर इन विषयों से अनभिज्ञ नहीं थे।

मुझे एक घटना याद दिलाई गई है जब औरंगजेब का परिवार मक्का जाना चाहता था तो उसे सूरत में पुर्तगालियों से वीज़ा लेना पड़ा था। उसे यह ध्यान नहीं आया कि भारत के आस-पास का समुद्र भारतीय साम्राज्य का ही हिस्सा है। नहीं, उसे ऐसा ध्यान नहीं आया। इसी प्रकार, हम देखते हैं कि उत्तर का सैनिक बल भी समुद्रवर्ती नहीं है। जबकि दक्षिण इसके बिल्कुल विपरीत है। दक्षिण के सभी राज्य समुद्रों के प्रति अधिक जागरूक थे। उदाहरण के लिए, कालीकट में शताब्दी के बेहतरीन समय में वह पुर्तगालियों को खदेड़ देने में संभवत: इसलिए सफल रहे क्योंकि उनके पास समुद्री बल था। सांस्कृतिक क्षेत्र में भी दक्षिण का संपर्क पूर्व से अधिक हुआ और बौद्ध धर्म का संदेश सुदूर प्रदेशों जैसे इंडोनेशिया, जापान व चीन तक गया।

वह समुद्र के प्रति सजग थे। परंतु इस के साथ ही वे थल सुरक्षा के प्रति सचेत नहीं थे और यही कारण है कि दोनों पहलुओं को देखने व समझने में अजीब सी दुविधा थी। उत्तर समुद्र के प्रति सचेत नहीं था और दक्षिण थल के प्रति सजग नहीं था। दोनों को अलग-अलग तरह से हानि हुई और ऐसे ही प्रभुसत्ता को भी क्षति पहुंची। मैं समझता हूं कि इस संकुचित दृष्टिकोण ने भी इस बात को नजरअंदाज कर दिया कि आज समुद्र अधिक महत्वपूर्ण होते जा रहे हैं। प्रौद्योगिकी के आने से, वाष्प-चालित जहाजों के आने से तथा अन्य प्रौद्योगिकियों के विकास के साथ, इस उप-महाद्वीप के लिए अंतत: यह और अधिक महत्वपूर्ण हो गया है कि वह सामुद्रिक शक्ति को महत्व दे। परंतु इससे भी अधिक आवश्यक और मेरे विचार से हमारे लिए अधिक महत्वपूर्ण यह है कि हम वर्तमान समय में अपने सैन्य तंत्र की ओर अधिक ध्यान दें। दुर्भाग्य से भारत को कभी इस तथ्य का बोध नहीं हुआ कि युद्ध केवल वीरता से ही नहीं लड़े जाते अपितु इसके लिए प्रौद्योगिकी का भी उपयोग किया जाता है और यही कारण है कि जब उत्तरीय और समुद्र पार की ताकतों ने यहां आना शुरू किया तो उनकी युद्ध मशीनें और युद्ध संबंधी प्रौद्योगिकी हमारे पास उपलब्ध साधन से भिन्न थी। हम बहुत साहसी थे। परंतु फिर भी हम हमेशा एक कदम पीछे रहे।

बाबर का आना पहला प्रमाण है और अंग्रेजों का आना दूसरा प्रमाण है। पुर्तगालियों का आना एक और प्रमाण था। अत: मैं अनुरोध कर रहा हूँ कि यह सदन दृढ़ निश्चय करे और यह वचन दे कि ऐसा फिर कभी नहीं होगा। प्रौद्योगिकी में हम कभी पिछड़े नहीं रहेंगे। हमारी पराक्रमी सेनाओं, हमारे बहादुर बलों को नवीनतम प्रौद्योगिकी उपलब्ध करवायी जायेगी, जो भारत की सुरक्षा के लिए अत्यंत आवश्यक है। हमने यह ऐतिहासिक सबक लिया है और इतिहास के इस पाठ को हमें कभी नहीं भुलाना चाहिए। इसी कारण यह आवश्यक है कि हम जहां भी जाएं इस बात का ध्यान रखें कि जब सांस्कृतिक स्तर पर हम अपने विचार खुले रख सकते हैं, जब हम अपनी सभ्यता का संदेश जन-जन तक फैला सकते हैं तो हमें सुरक्षा स्तर पर भी अपने विचार खुले रखने चाहिएं।

हमारी विदेश नीति को इस तथ्य का ध्यान रखना चाहिए कि केवल वही विदेश नीतियां अंतत: सफल होती हैं जो सुरक्षा के प्रति सावधान व सतर्क रहती हैं। और सुरक्षा एक व्यापक अवधारणा है। यह केवल अस्त्र-शस्त्र नहीं, यह आंतरिक स्थिरता भी है। यह भोजन की निश्चिंतता भी है और आपसी संबंधों में सुरक्षा भी है। यदि सेनाएं केवल आंतरिक लड़ाई-झगड़ों के निबटारे में ही फंसी रहेंगी तो हमारी सुरक्षा को खतरा हो जाएगा। यदि हमारी आंतरिक शांति सुरक्षित नहीं होती, तो सुरक्षा क्षेत्र बहुत ही सुभेध हो जाती है। यदि हम आपस में ही लड़ते-झगड़ते रहेंगे तो हम प्रवेश पाने को तत्पर शक्तियों के लिए आकर्षक लक्ष्य बन जाएंगे। और इसी कारण सुरक्षा की व्यापक अवधारणा महत्वपूर्ण है। मैं अपनी बात दोहराता हूं कि सुरक्षा की इस व्यापक अवधारणा की मुख्य विशेषताएं अपनी प्रौद्योगिकी को आधुनिकतम बनाना, हमेशा राष्ट्र की एकता बनाना और इस बात की ओर गौर करना है कि आंतरिक झगड़े इस हद तक न बढ़ें कि सेना को देश के अंदर ही उलझना पड़े तथा इसके साथ ही आर्थिक स्थिरता तथा आर्थिक-सामाजिक न्याय पर भी गौर करना है। सामाजिक न्याय केवल सामाजिक न्याय का ही मामला नहीं है वरन् यह तो सुरक्षा का भी विषय है। सामाजिक दृष्टि से भेदभाव वाला कोई भी समाज कभी भी सुरक्षित नहीं हो सकता। अत: यह हमारे लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है कि जब हम सामाजिक न्याय के विषय में बात करें तो इस बात का ध्यान रखें कि यह सुरक्षा से भी संबंधित है।

मेरी ही पीढ़ी के कुछ लोगों को याद होगा कि स्कूल और कॉलेज के दिनों में हमने नेहरू जी द्वारा लिखित "**डिस्कवरी ऑफ इंडिया**" पढ़ी थी, जिसको उन्होंने बगैर किसी पाठ्य पुस्तक अथवा संदर्भ पुस्तक की सहायता के जेल की संकीर्ण कोठरियों में बैठकर लिखा था। वह हमें हमेशा दो चीजों का स्मरण कराते रहे। उन्होंने उस भारत का स्मरण कराया जो स्वत: ही शक्तिशाली था, उन्होंने उस भारत का स्मरण कराया जिसकी सांस्कृतिक जड़ें बहुत गहरी थी। उन्होंने भारत में होने वाले उस परिवर्तन की याद दिलाई जिससे भारत गुजर रहा था। उन्होंने उस भारत का स्मरण कराया, जिसके पास समय के साथ बदलने की क्षमता थी। अत: उपनिवेश काल आने पर ही यह समस्या अधिक कठिन हुई। भारत की सभ्यता और एकता पश्चिम से आने वाले विदेशी उपनिवेशी शासकों द्वारा भंग की गई थी और इसलिए पश्चिम के लोगों ने केवल हमारी सभ्यता और एकता को भंग करने का प्रयास ही नहीं किया अपितु यह तब तक जारी रहा जब तक हममें उनका विरोध करने का साहस नहीं जागा था। एक बार जो चुनौती सामने आई और एक बार तो गांधी जी ने हमारे दृढ़ निश्चय को जागृत किया हमने निरंतर उसका विरोध किया और इसी प्रकार से सामंजस्य तथा विरोध दोनों की प्रक्रिया चलती रही।

जब मैं राजाराम मोहन राय और टैगोर की बात करता हूं या सर सैयद अली की बात करता हूं तो देखता हूं कि इन सभी ने सामंजस्य व विरोध में एक न एक अध्याय जोड़ा है। और इस प्रकार भारतीय संघर्ष ने एक नया रूप धारण किया है। जब मैं विशेषरूप से गांधी जी और टैगोर के विषय में सोचता हूं तो ऐसा प्रतीत होता है मानो वे जुड़वां थे। वे कई प्रकार से सर्वसम थे और मैं न तो यह उद्धृत करूंगा कि टैगोर ने क्या लिखा था और न ही आपका ध्यान आकर्षित करूंगा। परंतु टैगोर का एक स्वप्न था और वह यह था कि भारत का भविष्य संकीर्ण राष्ट्रीयवाद न हो। उन्होंने हमेशा मानवतावाद पर भारत के मानवतावादी संदेश पर बल दिया। दो दिन पहले मैं शान्तिनिकेतन में बोल रहा था वहां श्री सोमनाथ चटर्जी भी मौजूद थे। शान्तिनिकेतन में मैंने सबको टैगोर द्वारा लिखित विख्यात उपन्यास "घरे बोरे" का स्मरण दिलाया। ...*(व्यवधान)*

कुछ माननीय सदस्य: यह "घरे बायरे" है।

श्री इन्द्र कुमार गुजराल: खराब बंगाली उच्चारण के लिए मुझे क्षमा करें।

यह लिखकर उन्होंने हमें यह बात पुन: याद दिलाने की कोशिश की कि राष्ट्रीयता की लहर के चलते ही हमें विश्व को नहीं भूलना चाहिए और यही बात टैगोर ने कही थी। गांधी जी ने भी दक्षिण अफ्रीका से प्रारंभ होने वाले अपने "एक्सपेरिमेन्ट्स विद ट्रूथ" में एक नये आयाम की बात की। कुछ देर पहले मैंने कहा था कि हम मध्य एशिया के प्रति अनभिज्ञ थे, हम कुछ समुद्री भागों के प्रति अनभिज्ञ थे और ब्रिटिश, पुर्तगाली तथा फ्रांसीसियों के आने पर हमें यूरोप के बारे में पता चला।

गांधी जी ने अंधकार ग्रस्त दक्षिण अफ्रीका की भूमिका के संबंध में हमारे ज्ञान में एक नया आयाम जोड़ा। गांधी जी के आगमन से पहले हमें इसके बारे में जानकारी नहीं थी। मैंने एक अन्य स्थान पर कहा था कि भले ही भौतिक रूप से गांधी जी भारत में पैदा हुए थे परन्तु राजनीतिक रूप से उनका जन्म दक्षिण अफ्रीका में हुआ था। और इस प्रकार अब वह अफ्रीका की निराशाजनक असहाय संघर्षरत अंधकारमय स्थिति तथा हमारे स्वतंत्रता संग्राम के बीच एक नई कड़ी बन गये। यह सब हमारे स्वतंत्रता संग्राम का भी एक हिस्सा बन गया। गांधीजी और विशेष रूप से नेहरूजी ने हमारे रास्ते और खोल दिये। स्पेन के गृहयुद्ध के दौरान उस समय हममें से कुछ लोगों को यह बात अजीब सी लगी जब उन्होंने स्वतंत्रता पूर्व ही स्पेन के गृह युद्ध के लिए एक शिष्टमंडल भेजने का निर्णय लिया। जब चीन में संघर्ष चल रहा था तो कोटनीस को भेजा गया। जब रूस के बारे में बात आयी तो उन्होंने सोवियत संघ को सभ्यता में एक नए प्रयोग के रूप में चित्रित किया तथा इसे स्वयं देखा। यह प्रयोग सफल भी हो सकता था और विफल भी हो सकता था। यह एक बिल्कुल अलग मुद्दा था। परन्तु उन्होंने उसमें देखा कि सामाजिक न्याय को राजनैतिक अभिव्यक्ति कैसे प्रदान की जा सकती है तथा विश्व को हमारे और निकट ला खड़ा किया। उन दोनों ने मिलकर विश्व को दो भागों—दमनकारी विश्व एवं उत्पीड़ित विश्व में विभक्त कर दिया। यहां हमारा पक्ष बिल्कुल स्पष्ट था। स्वतंत्रता संग्राम के पहले दिन से ही हम उत्पीड़ितों के पक्षधर थे तथा स्वाभाविक रूप से उनके मित्र बने रहे। जब नाजीवाद का पदार्पण हुआ तब टैगोर ने अपनी प्रसिद्ध कविता जो मैं समयाभाव के कारण यहां नहीं पढ़ पाऊंगा परन्तु इसमें टैगोर ने यह कहा कि जो भी जापान से आकर सहानुभूति का पाठ पढ़ाने का प्रयास कर रहे हैं और जिनका दबाव चीन की सभ्यता में बढ़ता जा रहा है के संबंध में उनका विरोध है। गांधी और नेहरू का भी यही विचार था। इस प्रकार से स्वतंत्रता संग्राम के मूल उद्देश्यों और मूल दृष्टिकोण को स्पष्ट किया गया था।

महोदय, मैं आपको पुन: याद दिलाऊँ कि चूंकि आप 15 अगस्त से 15 दिनों बाद पैदा हुए थे अत: हमारा देश नाजीवाद, फासीवाद और सैन्यवाद के अवशेषों पर खड़ा हुआ और इसलिए शांतिप्रिय ताकतों के साथ हमारा यह संबंध अदभुत है। हमारे विधिवत रूप से स्वतंत्र होने से पहले ही गांधीजी और नेहरूजी दोनों ने मिलकर प्रथम एशिया सम्मेलन बुलाया। वह संदेश क्या था? मूल संदेश यह था कि हम उनके पक्षधर हैं जो अभी तक भी उपनिवेश में हैं और अंतिम उपनिवेश संभवत: अंतिम से पहला जिसे आजादी मिली है वह शायद हांगकांग का हस्तांतरण है।

यहां के प्रधानमंत्री के रूप में मुझे हांगकांग के उस समारोह में भाग लेने के लिए चीनियों से निमंत्रण मिला था। साथ ही हमें अंग्रेजों से भी निमंत्रण प्राप्त हुआ था। हमने चीन के निमंत्रण का उत्तर दिया। अंग्रेजों के साम्राज्यवाद का तो अस्त ही हो रहा है अत: हमारी उनके लिए कोई सहानुभूति नहीं है।

हमारी सारी सहानुभूति हांगकांग में साम्राज्यबाद की समाप्ति के लिए थी। हांगकांग के साथ हमारा एक और संबंध भी है अन्तत:, अफीम युद्ध भारत की धरती से ही लड़ा गया था। अफीम युद्ध किस लिए हुआ था वह जो आज नशीली दवाओं का विरोध करते हैं, वे भूल जाते हैं उन्होंने इस मुद्दे पर युद्ध किया था कि ब्रिटिश भारत को चीन को अफीम पहुंचाने और निर्यात करने का अधिकार बरकरार रहे। वह एक युद्ध था और इसीलिए उन्होंने हांगकांग पर अधिकार कर लिया इसलिए हमें उन लोगों के प्रति अत्यधिक सहानुभूति है और वे प्रशंसा के पात्र हैं जिन्होंने अन्तत: इसे समाप्त कर दिया।

जैसा कि मैंने कहा, एशिया सम्मेलन उपनिवेशवाद के खिलाफ एक संदेश था। इसी प्रकार हमारी विदेश नीति का जन्म हुआ। हमारी विदेश नीति, जिसके बारे में मैं समझता हूं कि मेरे विद्वान साथी श्री पी.वी. नरसिंहराव ने भी स्वयं कहा है, किताबों में नहीं बनी थी। यह किसी पाठ्य पुस्तक से नहीं निकली थी, इसका उद्भव स्वतंत्रता संग्राम के अनुरूप हुआ इसलिए इससे हम तीन पाठ सीख पाए।

इसे विभिन्न चरणों में जिन लोगों ने बनाया उन्होंने तीन निदेश दिये। उनमें से पहला है कि स्वतंत्र रहो। भारतीय विदेश नीति को सभी

चीजों से मुक्त रखो, हार न मानो और हमेशा अपना सिर ऊंचा रखो मैं गर्व के साथ कहता हूं कि इन 50 वर्षों में ऐसा ही हुआ है। इस सरकार पर या इससे पहले की किसी भी सरकार पर पड़ने वाले कोई भी दबाव भारत को डराने में कभी सफल नहीं हुए। दूसरा संदेश था कि उत्पीड़ितों का हमेशा साथ दो। हमने उत्पीड़ितों का साथ दिया है। तीसरा संदेश था कि जहां भी तानाशाही हो, उसका हमेशा विरोध करो तथा हमेशा शांति के पक्षधर रहो। भारतीय इतिहास में कूटनीति का एक ही उद्देश्य रहा। वह उद्देश्य था कूटनीति द्वारा परिवर्तन न कि सौदे-बाजी। सौदेबाजी नहीं थी, इंडियन फॉरिन पॉलिसी में कभी सौदेबाजी नहीं थी।

इसने कभी लेन-देन का प्रयास नहीं किया। यहां हमने विचारों के बदलाव, विश्व संबंधों के बदलाव का भी समर्थन किया तथा सौदेबाजी का प्रयास कभी नहीं किया। हमारे आदर्श हमेशा से रहे हैं विचार ही हमारे स्रोत हैं परन्तु हमारे यहां आदर्श हमेशा ही संजोए गए हैं। अत: इसी पर हमने गुटनिरपेक्षता की अवधारणा का निर्माण किया। गुटनिरपेक्षता ने हमें नए मित्र दिए, वे जो उपनिवेशिक अनुभव रखते थे, वे जो कठिन समय से गुजरे थे, वे जो रंगभेद से पीड़ित थे और वे भी जो उस पक्ष से संबद्ध रहे। मैं खास तौर पर सोवियत संघ की ओर इशारा कर रहा हूं।

15 अगस्त, 1947 को प्रारंभ हुए नए दौर में हमने वही नीतियां जारी रखीं। हम इन मूल विचारों पर डटे रहे, चाहे यह वियतनाम हो, चाहे यह कोरिया हो, चाहे यह चीन हो अथवा दक्षिण अफ्रीका हो। मैं कई नाम गिना सकता हूं। बहुत से देश हैं। हर बार हमारा दृष्टिकोण स्पष्ट रहा है। हमारा साहस ही हमारा सबसे अच्छा साथी रहा। हमने अलगाव को कभी बुरा नहीं माना क्योंकि अलगाव से इसका निर्णय नहीं होता है। कई बार हमने इसका मूल्य भी चुकाया है परन्तु साथ ही हमने कभी हार नहीं मानी। शीत युद्ध के कारण हमें अवश्य कठिनाई हुई। अत: हमें गलत भी समझा गया। परन्तु हमारे क्षेत्र में जो सबसे बुरी बात यह हुई कि यहां तनाव पैदा किया गया। तनाव अपने आप उत्पन्न नहीं हुए अपितु इस क्षेत्र में हथियारों और अन्य सभी चीजों के द्वारा उत्पन्न हुआ है। ऐसा हमेशा से होता आ रहा है और इससे हमारे लिए लगातार कठिनाइयां उत्पन्न हो रही हैं। हम इस बात में विश्वास करते हैं और अपनी विदेश नीति के माध्यम से भी हमेशा ही इस बात के लिए प्रयत्नशील हैं कि दक्षिण एशिया में एकता, मित्रता और सहयोग बना रहे और उस नीति को बनाये रखने की कोशिश कर रहे हैं। हम भौगोलिक और व्यावहारिक रूप से विभाजित हो चुके हैं किंतु यह विभाजन ऐसा विभाजन है जो हमारे सामरिक सोच में परिवर्तन से और बढ़ा है। भारत की सामरिक सोच बाह्य रूप से थोपी गई विचारधाराओं से भिन्न थी।

महोदय, मैं आपका अधिक वक्त नहीं लूंगा लेकिन मेरा यह मानना है कि शीत युद्ध की समाप्ति होने से हमारे समक्ष नई चुनौतियां और नये अवसर भी उभर कर सामने आये हैं। विश्व में अचानक शांति नहीं आई है। साथ ही विश्वीकरण और क्षेत्रीयकरण दो भिन्न चीजें हैं जो एक साथ उभर कर सामने आयी हैं। निस्संदेह, हमारा दृष्टिकोण व्यापक होना चाहिए लेकिन हमें अपने क्षेत्रीय पहलुओं को भी ध्यान में रखना चाहिए। हम वही करने का प्रयास कर रहे हैं। सामान्यत: यह माना जाता है कि आगामी शताब्दी एशिया के देशों की शताब्दी होगी और वहीं से भारत के भविष्य का उदय होगा।

यहीं हमें अपनी भूमिका अदा करनी है। अत: भारतीय नीति की स्थिरता दक्षेस देशों से मित्रता और सहयोग के परिणामस्वरूप होगी। हम बंगलादेश, नेपाल, भूटान, मालदीव और श्रीलंका से नए संबंध स्थापित करने में सफल हुए हैं। जहां तक पाकिस्तान का संबंध है तो मैं एक मिनट में उसका उल्लेख करना चाहूंगा। आशियान देश अब हमारे पड़ोसी हैं। म्यांमार के आशियान में शामिल होने से अब हम भू-सीमाओं से भी जुड़ गए हैं। अत: अब हमारे पड़ोसी देशों के साथ संबंधों की शुरुआत इस क्षेत्र में करनी होगी। इसी तरह, इंडियन, ओसियन रिम एसोसियेशन अब हमारे पड़ोसी हैं और हम उसके संस्थापक सदस्य हैं। तुर्कमेनिस्तान, भारत और ईरान के बीच त्रिपक्षीय संधि के फलस्वरूप अब हमें मध्य एशिया के साथ संबंध स्थापित करने का मौका मिला है जिसे हमें सुदृढ़ करना चाहिए।

अपने सभी पड़ोसी देशों के साथ मित्रता और सहयोगपूर्ण दृढ़ संबंध स्थापित करने के हमारे दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुए हमने हमेशा ही पाकिस्तान के साथ आपसी विश्वास, मित्रता और सहयोग की भावना रखी है। विदेश सचिव स्तरीय वार्ता की शुरुआत इस दिशा में पहला कदम है। जैसा कि माननीय सदस्य अवगत हैं कि जून में इस्लामाबाद में हुई वार्ता की समाप्ति के पश्चात् एक संयुक्त वक्तव्य जारी किया गया था। आगामी दौर की वार्ता सितम्बर में दिल्ली में होने वाली है और हमने इसके लिए पाकिस्तान को तारीखें भी सुझाई हैं। उनके उत्तर की हमें प्रतीक्षा है। संयुक्त राष्ट्रसंघ के सामान्य सत्र में भाग लेने के लिए प्रधान मंत्री नवाज शरीफ और मैं न्यूयार्क जा रहे हैं और यदि मुझे अवसर मिलेगा तो मुझे उनसे मिलकर प्रसन्नता, खुशी होगी। माननीय सदस्यों को स्मरण होगा कि विगत मई में माले में उनके साथ मेरी एक उपयोगी बैठक हुई थी।

महोदय, मैं अपनी बात समाप्त करते-करते एक मिनट और लूंगा। संयुक्त राज्य अमरीका, यूरोप के देशों, जापान, चीन और रूस के साथ हमारे हमेशा सुचारू और मैत्रीपूर्ण संबंध रहे हैं। यहां पर मैं मात्र यही कहना चाहता हूं कि अमरीका से हमारे संबंधों में सुधार हो रहा है और आने वाले महीनों में वाशिंगटन से अनेक महत्वपूर्ण लोग भारत की यात्रा करने वाले हैं। जैसाकि माननीय सदस्य अवगत हैं कि अमरीका के राष्ट्रपति भी आगामी वर्ष में भारत की यात्रा करने वाले हैं। मुझे न्यूयार्क में होने वाले संयुक्त राष्ट्र संघ महासभा के आगामी सत्र के दौरान राष्ट्रपति क्लिंटन से भेंट करने का भी अमरीका से एक प्रस्ताव प्राप्त हुआ है। इस प्रस्ताव को स्वीकार करते हुए मैंने अमरीका के लोगों को स्पष्ट कर दिया था कि भारत-पाकिस्तान संबंधों पर किसी भी

प्रकार की मध्यस्थता कार्यसूची में शामिल नहीं होनी चाहिए जिसे उन्होंने स्वीकार कर लिया। मैं सभा को आश्वस्त करना चाहता हूं कि भारत के धर्मनिरपेक्ष स्वरूप, इसकी एकता और अखंडता के बारे में कोई वार्ता नहीं की जाएगी।

विश्व के दो सबसे बड़े लोकतांत्रिक देशों के बीच अनेक बातों पर चर्चा की जा सकती है और यदि वार्ता हुई तो मैं राष्ट्रपति क्लिंटन के साथ मैत्रीपूर्ण और द्विपक्षीय समझौतों, विशेषकर एशिया-प्रशान्त क्षेत्र से संबंधित आम हित के मुद्दों पर विस्तार से चर्चा करूंगा।

महोदय, यदि मुझे समय मिलता तो मैं विभिन्न मुद्दों पर अपनी बात रखता। लेकिन मैं एक मुद्दा, जिसके बारे में मेरे मित्र श्री अटल बिहारी वाजपेयी ने कहा था, का उल्लेख किए बिना नहीं रह सकता। यह भ्रष्टाचार और राजनीति के अपराधीकरण से संबंधित है। अपने भाषण के दौरान श्री अटल बिहारी वाजपेयी ने संसद के समक्ष लोक पाल विधेयक के लाए जाने में हुए विलंब पर खेद प्रकट किया था। उन्होंने यह भी कहा कि सभी राजनैतिक नेताओं को अपने सगे-संबंधियों सहित अपनी सम्पत्तियों की घोषणा करनी चाहिए। जैसा कि माननीय सदस्यों को ज्ञात है कि 13 सितम्बर, 1996 को लोक सभा में लोक पाल विधेयक लाया गया था। इस विधेयक को गृह मंत्रालय से संबंधित स्थायी समिति को सौंपा गया था जिसने अब अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत कर दी है। स्थायी समिति की सिफारिशें सरकार के विचाराधीन हैं। संसद के आगामी सत्र में समिति की सिफारिशों पर विचार करने के लिए एक पुनरीक्षित विधेयक लाया जाएगा। हम आशा करते हैं कि यह कानून हमारी अपनी शासन व्यवस्था में सुधार और भ्रष्टाचार जैसी बुराइयों को दूर करने की दिशा में महत्वपूर्ण कदम होगा।

महोदय, श्री वाजपेयी ने एक समाचार का उल्लेख करते हुए कहा था कि प्रधान मंत्री कार्यालय में केन्द्रीय आसूचना ब्यूरो के 194 मामले मुकदमा चलाए जाने की स्वीकृति हेतु लंबित पड़े हैं।

अपराह्न 2.00 बजे

वास्तविक स्थिति यह है कि प्रधान मंत्री कार्यालय में एक भी मामला लंबित नहीं है। परन्तु विभिन्न केन्द्रीय मंत्रियों के समक्ष और राज्य सरकारों के पास 157 मामले लंबित हैं। इनमें से 141 मामले केन्द्रीय मंत्रियों के पास लंबित हैं। भ्रष्टाचार के विरुद्ध लड़ाई के एक कदम के रूप में भ्रष्टाचार के मामले में लिप्त सरकारी अधिकारियों को दंडित करने में तीव्रता लाए जाने का विशेष प्रयास किया गया है। भारत सरकार मामलों की संख्या जो मार्च, 1997 के अंत तक 141 थी, को कम करके अब वर्तमान में 79 तक ले आई है। भारत सरकार के सभी सचिवों को यह कड़े निर्देश दिये गये हैं कि 15 दिनों के अंदर-अंदर पिछले बकाया केसों का निपटान कर दें और सभी नये केसों के संबंध में निर्णय एक माह के अंदर ले लें। न्यायालयों में भ्रष्टाचार के मामलों से संबंधित जांच-पड़ताल और उसकी अनुवर्ती कार्यवाही के स्वरूप और प्रकार के बारे में भी वहां विचार प्रकट किये गये। सरकारी तंत्र में संस्थागत कार्य प्रणाली की स्थापना, वर्तमान स्थिति में सुधार लाने के लिए उपायों के बारे में अंतिम निर्णय लिया जा रहा है। सरकार वर्तमान सतर्कता कार्य प्रणाली पर पुनः विचार करने और उसे द्रुतगामी बनाने के लिए राज्य सरकारों के परामर्श से ऐसे उपाय कर रही है जिससे कि भ्रष्टाचार के केसों का निपटारा तीव्रता से एक निश्चित समयावधि में ही हो जाए। इसी संबंध में राज्यों के भ्रष्टाचार निरोधक विभागों के प्रमुखों तथा विभिन्न सरकारी उपक्रमों के सतर्कता अधिकारियों का एक सम्मेलन 4 और 5 सितम्बर को अर्थात् आज से ठीक दो दिन बाद होगा। इसके बाद मुख्य मंत्रियों का एक सम्मेलन होगा।

सरकारी प्रक्रिया को और पारदर्शी बनाने के लिए सरकार ने श्री एच.डी. शोरी की अध्यक्षता में "सूचना पाने का अधिकार" पर एक कार्यदल गठित किया है। हम चाहते हैं कि "सूचना पाने का अधिकार" पर एक विधेयक संसद के अगले सत्र में प्रस्तुत किया जाए।

मैं चुनाव सुधारों पर विस्तृत चर्चा करने के लिए सदन का समय नहीं लूंगा क्योंकि मैं समझता हूं कि इसके लिए पूरा सदन सहमत है। मैं जल्दी ही सर्वदलीय बैठक में एक विधेयक प्रस्तुत करूंगा जिससे कि चुनाव सुधारों पर एक नई सहमति के साथ हम किसी परिणाम पर पहुंचें।

मैं और भी अन्य बहुत से विषयों पर चर्चा कर सकता हूं किन्तु मैं जानता हूं कि समय की पाबंदी है। अगर आप मुझे इजाजत दें तो मैं इन्हें सदन के सभा पटल पर रख दूं।

अध्यक्ष महोदय: कृपया ऐसा ही करें। आपका बहुत-बहुत धन्यवाद।

श्री रूपचंद पाल (हुगली): महोदय क्या आप मुझे आधा मिनट देंगे।

[हिन्दी]

कुमारी उमा भारती (खजुराहो): महिला आरक्षण के बारे में प्रधान मंत्री ने नहीं बताया।

[अनुवाद]

श्री इन्द्र कुमार गुजराल: कृपया मुझे समाप्त करने दें। ...*(व्यवधान)*

श्री मृत्युंजय नायक (फूलबनी): महोदय, प्रधानमंत्री जी, जो कि विदेश मंत्री भी हैं, एक महत्वपूर्ण मुद्दा भूल गये हैं। सुरक्षा परिषद में भारत की स्थायी सदस्यता के दावे के बारे में बात करना वे भूल गये हैं। कांग्रेस दल में इस विषय पर चर्चा हो चुकी है। प्रधान मंत्री अमरीका जा रहे हैं और श्री क्लिंटन भी भारत आ रहे हैं। ...*(व्यवधान)*

[हिन्दी]

कुमारी उमा भारती: प्रधान मंत्री जी महिला आरक्षण के बारे में तो बताइये।

[अनुवाद]

अध्यक्ष महोदयः यह कोई तरीका नहीं है। कृपया इस अवसर के महात्म्य को नष्ट मत कीजिए। प्रधान मंत्री के लिए प्रत्येक विषय पर चर्चा करना संभव नहीं है।

श्री इन्द्र कुमार गुजरालः महोदय आपकी अनुमति से मैं सहकारी संघवाद, योजना तथा उदारीकरण के संदर्भ में इसकी भूमिका खाद्य, सुरक्षा और पेयजल, शिक्षा, साक्षरता, जनसंख्या के मुद्दे पर बुनियादी ढांचे में नीतिगत पहल की योजना, जैविक भिन्नता, पंचायती राज पर और सामाजिक न्याय आदि पर अपनी टिप्पणियां सदन के सभा पटल पर रख रहा हूं। मेरा ख्याल है कि यह सदस्यों के लिए लाभकारी रहेगा क्योंकि मैं सदन का और अधिक समय नहीं ले सकता।

महोदय, मेरे आदरणीय मित्र ने एक मुद्दा उठाया है ...*(व्यवधान)* कृपया पहले मुझे समाप्त करने दें और उसके बाद मैं आपकी बात का उत्तर दूंगा। ...*(व्यवधान)*

[हिन्दी]

प्रो. रासा सिंह रावत (अजमेर): राजनीति में अपराधीकरण के बारे में प्रधान मंत्री जी इस पर प्रकाश डालें।

[अनुवाद]

श्री सोमनाथ चटर्जी (बोलपुर): महोदय, यह उचित नहीं है।

अध्यक्ष महोदयः कृपया व्यवस्था बनाए रखिए।

श्री इन्द्र कुमार गुजरालः अध्यक्ष महोदय, मैं यह कहते हुए अपना वक्तव्य समाप्त करता हूं कि इन चर्चाओं से सदन और देश को काफी लाभ मिला है। कृपया जो मैंने कहा, उसे मुझे दुबारा कहने दें तथा इसी के साथ जिस शानदार तरीके से यह चर्चा संपन्न हुई उसके लिए मैं संसद के दोनों सदनों के सदस्यों के प्रति अपनी श्रद्धा और आभार व्यक्त करता हूं। यह एक अन्य तरीके से भी उद्भूत था। हम यहां पर हास्यात्मक उत्तर-प्रत्युत्तर नहीं कर रहे थे और न ही हम वाद-विवाद कर रहे थे। हम सब अपनी-अपनी दृष्टि से भविष्य का अवलोकन करने का प्रयास कर रहे थे।

मैं समझता हूं कि यह देश के भविष्य की सामूहिक कल्पना है।

श्री अटल बिहारी वाजपेयी द्वारा पेश किए गए प्रस्ताव पर हुई चर्चा का जवाब देते हुए प्रधान मंत्री द्वारा सभा पटल पर रखी गई टिप्पणियां

एक. सहकारी संघवाद

बहुदलीय प्रणाली के उद्भव के फलस्वरूप विभिन्न दल या अनेक दल मिलकर केन्द्र और राज्यों में सत्ता में आ रहे हैं। इसके कारण केन्द्र-राज्य संबंधों का मुद्दा बहुत ज्यादा प्रकाश में आया है। केन्द्र और राज्यों के बीच संबंध संविधान के द्वारा शासित होते हैं जिसमें विधायी और कार्यकारी शक्तियों के स्पष्ट विभाजन के साथ संघीय स्वरूप की कल्पना की गई है। यद्यपि केन्द्र और राज्यों की आवश्यकताओं के मध्य उचित संतुलन है, संविधान ने देश की एकता और अखण्डता को बनाए रखने के लिए केन्द्र को पर्याप्त शक्तियां भी प्रदान की हैं।

सरकारिया आयोग, जिसने केन्द्र-राज्य संबंधों के सभी पहलुओं का अध्ययन किया था, इस निष्कर्ष पर पहुंचा था कि ढांचागत परिवर्तनों की कोई आवश्यकता नहीं है क्योंकि एक मजबूत केन्द्र अपरिहार्य है न केवल स्वतंत्रता की रक्षा और अनुरक्षण और देश की एकता के लिए अपितु राष्ट्रीय चिन्ता के मूल मुद्दों पर एक समान नीति के समन्वयन के लिए एक मजबूत केन्द्र अपरिहार्य है। अन्तर्राज्यीय परिषद को क्रियाशील बनाया गया है और यह महत्वपूर्ण मुद्दों पर आम सहमति बनाने में समर्थ भी रही है। हम एक सहकारी संघवाद के युग की दिशा में अग्रसर हो रहे हैं जहां हम अपनी परेशानियों को दूर कर सकते हैं और आपसी सामंजस्य की भावना से अपनी समस्याओं का समाधान कर सकेंगे।

दो. लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरणः पंचायती राज संस्थाएं

73वें संविधान संशोधन अधिनियम, 1992 के अंतर्गत पंचायती राज संस्थाओं का प्रवेश एक महत्वपूर्ण युगान्तरकारी घटना थी। लोकतंत्र को सुदृढ़ करने की दिशा में पंचायती राज संस्थाओं को संवैधानिक दर्जा प्रदान करना अत्यधिक महत्वपूर्ण कदम है क्योंकि भारत ने 1950 में अपने संविधान को अंगीकृत किया था। यद्यपि देश के अधिकांशतः हिस्सों में चुनाव कराए जा चुके हैं परन्तु अभी भी कई राज्यों में शक्तियों का वास्तविक प्रत्यायोजन अभी भी होना बाकी है।

मैंने हाल ही में मुख्य मंत्रियों की एक बैठक बुलाई थी और पंचायतों को शक्ति संपन्न बनाने की गति को तेज करने के लिए प्रक्रिया के प्रस्ताव को रूपायित किया। मुख्य मंत्रियों ने कुछ व्यावहारिक कठिनाइयों का उल्लेख किया था। इन समस्याओं को हल करने के लिए हमने मुख्यमंत्रियों की एक समिति गठित की है जो इस पर विचार-विमर्श करेगी और पंचायती राज संस्थाओं को प्रभावी रूप से शक्ति सम्पन्न बनाए जाने हेतु विशिष्ट प्रस्तावों को प्रस्तुत करेगी।

तीन. योजना प्रक्रिया और उदारीकरण के संदर्भ में इसकी बदलती भूमिका

भारतीय अर्थव्यवस्था में अभी भी ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों में काफी संख्या में नागरिक गरीबी में जीवन-यापन करते हैं। विभिन्न क्षेत्रों और विभिन्न सामाजिक समूहों के बीच अभी भी बड़ी मात्रा में असमानता विद्यमान है। बाजार व्यवस्था से यह अपेक्षा नहीं की जा सकती कि वह स्वयं इन असमानताओं को दूर कर देगी। वास्तव में समुचित योजना और तर्कसंगत सरकार के हस्तक्षेप के अभाव में बाजार की शक्तियां ऐसी असमानताओं को और बढ़ा देंगीं। यह देश मूलभूत सामाजिक अवसंरचना, जैसे कि सुरक्षित पेयजल, प्राथमिक स्वास्थ्य और प्राथमिक शिक्षा सुविधाएं, के न्यूनतम प्रावधान से पीड़ित है, जोकि हमारे लोगों की जीवन शैली की गुणवत्ता को निर्धारित करने वाला मूल घटक है। यह ऐसे क्षेत्र हैं जिसमें निजी क्षेत्र की पहलों द्वारा कोई प्रमुख भूमिका निभाए जाने की सम्भावना नहीं है और सरकार की यह प्राथमिक उत्तरदायिता होगी कि वह समुचित हस्तक्षेपों को सुनिश्चित करे।